अहिंसा और सामाजिक परिवर्तन : आधुनिक सन्दर्भ

—प्रो० कल्याण मल लोढ़ा (कलकत्ता)

आज मानव चिन्तन एक विचित्र वैचारिक ऊहापोह से संत्रस्त और ग्रस्त है। एक विचारधारा है, जो हिंसा, प्रतिशोध और सत्ता को मनुष्य की प्रकृति का जन्मजात और आवश्यक अंग गिनती है तो दूसरी अहिंसा, समता, सहिष्णुता, मैत्री और सहअस्तित्व को। नीट्शे ने कहा था कि दयनीय और दुर्बल राष्ट्रों के लिए युद्ध एक औषधि है। रस्किन ने माना कि युद्ध में ही राष्ट्र अपने विचारों की सत्यता और सक्षमता पहचानता है। अनेक राष्ट्र युद्ध में पनपे और शांति में नष्ट हो गये। मोल्टेक युद्ध-हिंसा को परमात्मा का आन्तरिक अंग गिनता था। उसकी धारणा थी कि स्थायी शान्ति एक स्वप्न है और वह भी सुन्दर। डार्विन का शक्ति सिद्धान्त तो ज्ञात है ही। स्पेंगलर जैसा इतिहासज्ञ भी युद्ध को मानवीय अस्तित्व का शाश्वत रूप गिनता है। आर्थर कीथ ने युद्ध को मानवीय उत्थान की छँटाई गिना। वैज्ञानिक डेसमोन्ड मोरिस, 'नैकड एप' में राबर्ट आड्रे 'दि टेरीटोरियल इम्पेरेटिव' में, कोनार्ड लारेंज 'आन एग्रेसन' में फ्राइड की मान्यता के पक्षधर हैं कि आक्रामकता और हिंसा मनुष्य की जन्मजात, स्वतंत्र, सहज एवं स्वाभाविक चित्तवृत्ति है।

इन भ्रान्त धारणाओं के विपरीत दूसरा व्यापक और स्वस्थ मत है उन विचारकों का, जो अहिंसा के सिद्धांत और दर्शन को आज चिन्तन के नये धरातल पर प्रतिष्ठित कर उसे केवल धर्म और अध्यात्म का ही नहीं, दर्शन और मुक्ति का साधन ही नहीं, सामाजिक परिवर्तन, अहिंसक समाज, विश्वशांति और सार्वभौम मानवीय मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में भी स्वीकार कर रहा है। यूनेस्को जैसी संस्था ने भी इस पर गम्भीर विचार-विमर्श के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ आयोजित कीं, सामाजिक सर्वेक्षण और शोध योजनाओं को विविध रूपेण क्रियान्वित किया। आज सभी देशों, वर्गों और समाजों के प्रबुद्ध चिन्तक यह स्वीकारते हैं कि स्थायी विश्वशान्ति के लिए आमूल राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक क्रान्ति की अपरिहार्य आवश्यकता है, वह केवल महावीर, बुद्ध व गाँधी की अहिंसा से सम्भव है। यों कहना अधिक संगत होगा कि मानव सभ्यता का भविष्य अहिंसा व शान्ति पर ही निर्भर करता है। सम्भवतः यही कारण था कि महान वैज्ञानिक आइन्स्टीन ने अपने कक्ष में महात्मा गाँधी का चित्र लगाया। किसी राजनेता और वैज्ञानिक का नहीं। मानव समाज की मूल प्रक्रिया, मानवीय अभिप्रेरणा व प्रयोजन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की संरचना शांति, सुव्यवस्था और समता की ओर उन्मुख रही है।

सामाजिक मनोविज्ञान का मूलाधार जिस व्यवस्था और संस्थावाद को प्रमुखता दे रहा है, उसकी निर्मिति मैत्री, समता और भ्रातृत्व पर ही आधृत है। प्रसिद्ध विद्वान सी० राइट मिल का कथन है कि आज मनुष्य की समस्त चिन्ताधारा तृतीय विश्व युद्ध को यथार्थ मानकर भ्रमवश विश्व शांति की सम्भावना स्वीकार नहीं करती। पी० सोरोकिन का भी यही अभिमत है। उसकी दृष्टि में आज सामाजिक व्यवस्था और सांस्कृतिक जीवन मूल्यहीन, प्रत्ययहीन, आस्थाहीन हो गए हैं और स्पर्धा एवं संकटग्रस्त होकर चारों ओर विनष्टिवादी कटुता का बोलबाला है।

आइन्सटीन ने तो स्पष्ट कह दिया था, 'हमें मानवता को याद रखना है जिससे हमारे समक्ष स्वर्ग का द्वार खुल जायेगा अन्यथा सार्वभौम मृत्यु को ही झेलना होगा। कोई अंधी मशीन हमें अपने विकराल वज्र दन्तों में जकड़ लेगी।' एक ओर विश्व संहार का यह भय और आतंक है, तो दूसरी ओर यह मान्यता जोर पकड़ रही है कि रचनात्मक पदार्थवाद और नैतिक क्रान्ति मानवीय मूल्यों के मानदण्ड के रूप में ही अहिंसक समाज व संस्कृति के लिए स्थायी विश्वशान्ति के हेतु बन सकते हैं। सामाजिक व सांस्कृतिक विकास आज द्व्यर्थक हो रहा है। एक ओर तकनीकी व वैज्ञानिक आविष्कारों ने राष्ट्रों के आचार-विचार-व्यवहार में परिवर्तन कर दिया है तो दूसरी ओर सत्ता व शासन की अमित महत्वकांक्षाओं ने चुनौतियाँ उत्पन्न कर तनाव और संघर्ष उपस्थित किया है। कोई राष्ट्र अन्य उन्नत राष्ट्रों से पिछड़ना नहीं चाहता, दूसरी ओर सामान्य जनता शान्ति, सुव्यवस्था और सामाजिक परिवर्तनों की मांग कर परस्पर सौमनस्य और सौरस्य का आग्रह कर रही है। युद्ध की भयावहता इससे ही स्पष्ट है कि आज संहार अस्त्रों पर तीस हजार डालर प्रति सैकेण्ड खर्च हो रहे हैं और उधर हर दो सैकेण्ड पर एक बालक, चिकित्सा के अभाव में विकलांग हो रहा है। अमेरिका नाभिकीय युद्ध के लिए रसायनिक और जैविक तत्त्वों के मिश्रण से ऐसे अस्त्र बना रहा है, जो विशेष जातियों और नस्लों को पहचानकर समाप्त कर देंगे एवं मानवीय इच्छाओं का दमन कर जनता की मानसिकता और आचरण-क्षमता को स्वचालित यन्त्र में बदल देंगे। इसके विपरीत प्रेमचन्द के शब्दों में 'विश्व समर का एकमात्र निदान है विश्व-प्रेम।' इस सन्दर्भ में आज विश्व साहित्य में तकनीकी संस्कृति का घोर विरोध हो रहा है। ब्रूस मेजलिस ने १९८० में लिखा कि आविष्कारों की महानता और उनके परिणामों के हीनता की घोर विषमता से मैं हैरान हूँ। नारमन कंजिन्स ने कहा कि 'अंतरिक्ष की मानवयात्रा का महत्व यह नहीं है कि मनुष्य ने चन्द्रमा पर पैर रखे पर यह है कि उसकी दृष्टि वहाँ भी अपनी पृथ्वी पर ही लगी रही।' यही सोचना है कि मनुष्य की इस सर्वव्यापी चारित्रिक आन्तरिक बाह्य अस्मिता के संकट से मुक्ति का उपाय अहिंसक क्रान्ति देकर क्या स्थायी शांति और सुव्यवस्था का प्रमाण बन सकती है? इसी दृष्टि से आज गम्भीर विचारक और चिन्तक अहिंसा के दार्शनिक और धार्मिक पक्ष के साथ-साथ उसकी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक उपयोगिता और इयत्ता पर उन्मुक्त भाव से विचार कर रहे हैं। एक उदाहरण पर्याप्त होगा।

टी. के. उन्नीथन एवं योगेन्द्रसिंह के सर्वेक्षण के अनुसार आज नेपाल, श्रीलंका और भारत का ७० प्रतिशत कुलीन बर्ग और ६३·८ सामान्य वर्ग अहिंसा को प्रधानतः राजनीतिक और सामाजिक स्वरूप में स्वीकार करता है। ये वर्ग सभी धर्मों के हैं। इन वर्गों की दृढ़ मान्यता है कि अहिंसा की उपलब्धि से मानव जाति का नैतिक और आध्यात्मिक विकास होगा। उन्नीथन ने अहिंसा की संगति और स्वीकृति का समाजशास्त्रीय पद्धति से विश्लेषण कर यह निष्कर्ष निकाला है कि "हमारे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समक्ष दो ही विकल्प हैं—या तो परम्परा से प्राप्त नैतिक व्यवस्था स्वीकार करें या फिर समाज से निःसृत उसकी प्रायोगिक मान्यता को। परन्तु यहीं प्रश्न उठता है कि, वर्तमान अनैतिक समाज से हम किस प्रकार नैतिक व्यवस्था प्राप्त कर सकते हैं? सत्ता और व्यवस्था की संकल्पना लोकोत्तर होनी चाहिए, जो विद्यमान परिस्थितियों से उत्पन्न प्रत्ययात्मक और पारम्परिक हो।" डा० राधाकृष्णन के शब्दों में 'अहिंसा कोई शारीरिक दशा नहीं है, अपितु यह तो मन की प्रेममयी वृत्ति है।' मानसिक स्थिति के रूप में अहिंसा केवल अप्रतिरोध से भी भिन्न है। वह जीवन का एक समर्थ रचनात्मक पक्ष है। मानव कल्याण की भावना ही सच्चा बल और सर्वश्रेष्ठ गुण है। वाल्मीकि कहते हैं—"योद्धा का बल घृणित है, ऋषि का बल ही सच्ची शक्ति है-धिग्बलम् क्षत्रिय बलम्, ब्रह्म तेजोबलं बलम्।" अहिंसक मुनि, ऋषि या संन्यासी प्रत्यक्षतः सामाजिक संघर्ष में भाग नहीं लेते पर उनका योगदान निर्विवाद है।

पुनः डा० राधाकृष्णन के अनुसार वे "सामाजिक आन्दोलन के सच्चे निदेशक हैं। उन्हें देखकर हमें अरस्तू की 'गतिहीन प्रेरक शक्ति' का स्मरण हो जाता है।" ताल्सताय ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'युद्ध और शान्ति' में लिखा है—"युद्ध एक सामूहिक हत्या है, जिसके उपकरण हैं, देश द्रोह को प्रोत्साहन, मिथ्याभाषण, निवासियों का विनाश आदि।"

पहले हम अहिंसा द्वारा सामाजिक परिवर्तन की सम्भावनाओं पर विचार करें। एरिक फ्रोम के अनुसार आज साधन को ही साध्य समझना सामाजिक व्यवस्था की सबसे बड़ी विसंगति है। भौतिक समृद्धि के लिए उत्पादन और उपभोग के साधन हमारे साध्य बन गए हैं इसी से आज सम्पूर्ण समाज अपने आदर्श और उद्देश्य से च्युत हो गया है। मनुष्य मनुष्य से भयभीत है। उसकी वैयक्तिक अन्तहीन अधिग्रहण और अवाप्ति की लालसा ने उसकी स्वस्थ मानसिकता नष्ट कर दी है। हिगेल के शब्दों में 'मनुष्य सबसे सौभाग्यपूर्ण प्राणी है क्योंकि वह अकेला (रोबिनसन क्रूसो की भाँति) नहीं रह सकता, पर वह सबसे अभागा भी है क्योंकि अन्य मनुष्यों के साथ सौमनस्य और प्रेम से भी नहीं रहता'—अर्थात् सामाजिकता की प्रकृत आकांक्षा के साथ ही उसमें विकृत असामाजिकता है। वह प्रकृति के सनातन नियमों को भूल गया है। आर्थिक व राजनैतिक जीवन की केन्द्रस्थ यान्त्रिकता में, वह व्यक्तित्व की स्वतन्त्रता खो बैठा। उसके दिल और दिमाग पर शासन तन्त्र की क्रूरता और निरंकुशता हावी है। समाजशास्त्रियों ने व्यक्ति की इस विकृत मानसिकता का विशद् विवेचन किया है। सामाजिक, आर्थिक दृष्टि से एक ओर वह अतीव परिग्रहवादी है, दूसरी ओर वह वर्तमान संस्कृति की जड़ता से विच्छिन्न। इसी को समाजशास्त्र में 'एनोमो' और 'ऐलिनेशन' कहा गया है। मार्क्स ने अपने सिद्धांतों में भिन्न दृष्टि से व्यक्ति के ऐलिनेशन पर विचार किया। एलिनेशन की विवेचना करते हुए गर्सन का मत है कि तकनीकी—औद्योगिक क्रान्ति, नौकरशाही, विलास वैभवपूर्ण जीवन प्रक्रिया, आदर्शों का लोप, नैतिक मूल्यों का ह्रास, विकृत मनोविज्ञान (फ्राइड आदि का) इस मानसिक विच्छति के कारण हैं। इसका अर्थ है कि आज व्यक्ति एकाकीपन, अनैक्य, असन्तोष का शिकार होकर वह अपने वृहत् सामाजिक सम्बन्धों को विस्मृत कर रहा है। उसे न तो अपने से सन्तोष है और न अपनी उपार्जन क्षमता से। वह असंयत है। सांस्कृतिक संकट उसे हतप्रभ कर रहा है। उसकी आकांक्षाओं और उपलब्धियों में प्रचुर व्यवधान है। उसकी एषणाओं का अन्त नहीं। वह अर्थरहित, मूल्यविहीन, एकाकी, आत्मनिर्वासित और शक्तिहीन है। यही उसका सांस्कृतिक विघटन है। आज यह आत्मविमुखता और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सांस्कृतिक अलगाव चारों ओर व्याप्त है। एनोमी वह मानसिक दशा है, जिसमें नैतिक जड़ें नष्ट हो जाती हैं—मनुष्य विशृंखलित होकर अपना नैरन्तर्य खो बैठता है—आध्यात्मिक स्तर पर वह अनुर्वर और निर्जीव है। उसका दायित्व बोध किसी के प्रति नहीं है। उसका जीवन पूर्णतः निषेधात्मक है। उसके जीवन में न तो अतीत है, न वर्तमान और न भविष्य —केवल इनकी एक क्षीण संवेदना ही विद्यमान है। (मेक्लवर) उसकी यह विक्षिप्त मानसिकता सामाजिक परिवेश का परिणाम है। एलीनेशन जहाँ मनोवैज्ञानिक है, एनोमी वहाँ सामाजिक-सांस्कृतिक। एनोमी समाज की नियामक संरचना के ह्रास का फल है, क्योंकि व्यक्ति की आकांक्षा और उसकी पूर्ति में भारी व्यवधान और संकट है। इस दुरवस्था के निवारण के लिए हृदय और मस्तिष्क का परिष्करण या दर्शन और ज्ञान का उदात्तीकरण आवश्यक है और यह व्रत साधन से ही संभव है। व्रत साधन का व्यष्टि से प्रारम्भ होकर समष्टि की ओर अभिनिविष्ट होना ही सही उपचार है।

हमें स्मरण रखना चाहिए कि समष्टि चेतना और सामूहिक संश्लिष्ट ऐक्य मानवेतर सृष्टि में भी जब सहज, स्वसंभूत और सुलभ है, तब मनुष्य में ही क्यों आज इसका अभाव है? विख्यात मनोवैज्ञानिक इरिक इरिकसन इसे ही 'किंकर्तव्यविमूढ़ता' कहते हैं। उनके अनुसार मनुष्य यह नहीं जानता कि वह क्या है, उसकी संलग्नता कहाँ और किससे है? यह एक भीषण मानसिक रोग है।

इसके विपरीत मानवेतर सृष्टि को देखें। एडवर्ड विल्सन ने अपने आविष्कारों से यह प्रमाणित कर दिया कि प्रवाल, चींटी, सर्प आदि जीव-जन्तु भी पूर्णतः सामाजिक और संवेदनशील हैं, उनकी सामाजिक संरचना अत्यन्त सुव्यवस्थित है। आज तो विज्ञान ने पेड़-पौधों में भी संवेदनशीलता, आत्मसुरक्षा और ज्ञप्ति को प्रमाणित कर दिया है। इसी संवेदना का अनुभव कर परमहंस श्री रामकृष्ण ने पत्ते, फूल और पौधों को छूना तक नहीं चाहा।

हमें यह मानना चाहिए कि अहिंसा आज के विघटित, संत्रस्त और किंकर्तव्यविमूढ़ मनुष्य को निश्चित सुव्यवस्था देकर अहिंसक समाज की रचना करने में समर्थ है।

सिकन्दर, चंगेजखां, नादिरशाह महमूद गजनवी, आदि आतंकवादी और आततायी इतिहास में केवल नाम और घटना बनकर रह गए। मानव जाति ने उन्हें इससे अधिक महत्त्व नहीं दिया।

पर अमर हैं बुद्ध, महावीर, गाँधी, ईसा, मुहम्मद और नानक, कनफ्यूसियस आदि क्योंकि उन्होंने मनुष्यजीवन को उच्चतम नैतिक भूमि पर ले जाकर उसे मानवीय गुणों से समन्वित किया। जिन्होंने मानव जाति के विनाश का स्वप्न देखा, वे विस्मृत हो गए और जिन्होंने उसके उत्थान का सत्संकल्प किया, उसमें योगदान दिया, वे अजर-अमर। संस्कृति के विकास में उनकी देन अक्षय है। यह इस सत्य का प्रमाण है कि मनुष्य की आन्तरिकता मूलतः सर्वतोभावेन अहिंसक, शान्ति-प्रिय, प्रेममय, करुणाश्रित और नैतिक है। जीवन के सभी आदर्शों के मूल में अहिंसा है। अहिंसक समाज के लिए व्यक्ति का अहिंसक होना आवश्यक है। कौशेयवली ने अहिंसक व्यक्ति और अहिंसक समाज के पारस्परिक और अन्योन्याश्रित सम्बन्ध पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि मन, वचन और कर्म से अहिंसक व्यक्ति समाज में सर्वत्र मैत्री, प्रेम और सद्भाव का नियमन करता है। वह समूचे समाज में परिवर्तन लाने की क्षमता रखता है। इसी से विश्व के समस्त धर्मों ने अहिंसा को सर्वोच्च धर्म कहा। हिन्दू हो या इस्लाम, ईसाई हो या यहूदी, सिख हो या पारसी, सूफी या शिन्तो, सभी ने इसे स्वीकारा। भारतीय वाङ्मय तो इसी का उद्घोष है। वेद, उपनिषद, ब्राह्मण, स्मृति, पुराण,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाभारत, धर्मशास्त्र आदि सब अहिंसा को किसी न किसी प्रकार मनुष्यजीवन का प्राण तत्व गिनते हैं, 'मा हिंस्यात् सर्वं भूतानि'। अहिंसा का नैतिक राज्य ही सर्वोत्तम है। छांदोग्य उपनिषद कहता है कि यज्ञों में बलि नैतिक गुणों की ही देनी चाहिए 'अथयत् तपोदानं आर्जवं, अहिंसा, सत्यवचनं इतिता अस्य दक्षिणाः' — (३—१७) —आरुणिकोपनिषद शाण्डिल्योपनिषद ने भी यही माना।

ब्रह्मचर्यमहिंसा चापरिग्रहं च सत्य च यत्नेनहे

रक्षतो हे, रक्षतो हे, रक्षत इति (आरुणिकोपनिषद—३)

मनु जैसे आचार्यों ने 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' कहकर भी यह कहा 'अहिंसयेव भूतानां कार्यं श्रेयोऽनुशासनम्' (३-१५६) महाभारत की तो स्पष्ट घोषणा रही—अहिंसा सकलोधर्मो हिंसा धर्मस्तथाहितः' (शान्ति पर्व २७२—२०) अनुशासन और शान्ति पर्व इसी अहिंसक समाज की संकलपना करते हैं—'अहिंसा परमोधर्मः अहिंसा परमं तपः, अहिंसा परमं सत्यं, ततो धर्मं प्रवर्तते'—आदि। महाभारत के अन्त में महर्षि व्यास तक को कहना पड़ा कि 'परोपकार पुण्याय पापाय परपीड्नम्।' पद्मपुराण कहता है—

'अहिंसा प्रथमं पुष्पं पुष्पं इन्द्रिय निग्रहः। सर्व भूत दया पुष्पं, क्षमा पुष्पं विशेषतः।' महाभारत में राजविचक्षण, वृहद् धर्म पुराण में परशुराम और शिव का संवाद इसके प्रमाण हैं।

वायु पुराण का यह कथन पर्याप्त है—'अहिंसा सर्वभूतानां कर्मणा मनसा गिरा।' विष्णु पुराण में हिंसा के पारिवारिक रूप की चर्चा की गई है। अनृत, निकृति, भय, नरक, सन्तान, माया, वेदना, व्याधि, जरा, शोक, तृष्णा, क्रोध उसकी परम्परा है। इसके विपरीत अहिंसा के लिए ब्रह्म पुराण स्पष्ट कहता है 'सर्व भूतदयावन्तो विश्वास्याः सर्वजन्तुषु'। पुराण ही क्यों,समस्त भारतीय वाङ्मय, इसी की साक्षी देता है। भारतीय संस्कृति की नैतिकता धर्म पर सर्वाश्रित है। महावीर का तो जीवन ही इसका दिव्य संदेश है। इतिहास में महावीर (और बुद्ध) शाश्वत ज्योतिष्पुंज हैं, जो मानवजीवन के अन्तर्बाह्य अन्धकार को अहिंसा व करुणा से, अपरिग्रह व मैत्री-भावना से दूर कर सदा-सदा आलोक विकीर्ण करते रहेंगे। महावीर का जीवन, व्यक्तित्व और कर्तृत्व ही इसका उदाहरण है। कितने परीषह और उपसर्ग आये, कितनी चुनौतियाँ उन्होंने झेलीं, कितनी उपेक्षाएँ सहीं, पर वह—'आलोक पुरुष मंगल-चेतन' शान्त, स्थिर और दृढ़ निश्चय से अहिंसा द्वारा मनोगत अन्धकार को विनष्ट कर हमें ज्योतिर्मय कर गया। आभ्यन्तर व बाह्य दासत्व से उसने हमें मुक्ति दी। 'सत्वापि सामर्थ्ये अपकार सहनं क्षमा' की वे मूर्ति थे।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर के अनुसार 'यदि तोर डाक शुनै कोई न आशे, तबै एकला चलो रे'—वे अकेले ही यात्रा करते रहे—निर्भय और निःशंक होकर। अपरिचितों से न भय था और न परिचितों में आसक्ति। उनका जीवन पराक्रम, पुरुषार्थ और परमार्थ से सम्पूर्ण था। संकीर्ण मनोवृत्ति का उन्होंने त्याग किया। चंडकौशिक हो या संगम, यक्ष या कटूपतना, गौशालक हो या इन्द्रभूति गौतम सबके प्रति वही समभाव, वही सद्भाव। क्रोध, मान, लोभ, मोह कहाँ गये थे कषाय। समाप्त हो गये। महावीर का जीवन ही उनकी साधना का रहस्य है, अहिंसा की मंजूषा है। उन्होंने बताया कि अहिंसा का दर्शन सर्वव्यापी और सर्वशक्तिमान है।

आज जब पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है, प्राकृतिक संतुलन बिगड़ रहा है, पशु-पक्षी, जन्तु मनुष्य की हिंसक वृत्ति से समाप्त हो रहे हैं, महावीर ने आचार-विचार और व्यवहार के साथ-साथ आहार का शाकाहार का भी प्रमाण दिया—वे केवली थे—त्रिकालज्ञ, दिव्य। हिंसा पाप है, रौद्र है, भय है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोह है : एसो सो पाणवहो पावो, चण्डो, रुद्दो···· मोह महब्भयत्तवहओ ।

और अहिंसा, समस्त जीवों के प्रति संयमपूर्ण आचरण-व्यवहार है—'अहिंसा निऊणा दिट्ठा, सव्व भूएसु संजमो ।' वे सदा यही सिखाते रहे कि मनुष्य का चरित्रात्मक आन्तरिक रूपान्तरण मुख्य है, और इसके साधन है अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह और समता। यही मानवतावाद या समष्टिवाद की आधारशिला है। एक जैनाचार्य का कथन है अहिंसा ही प्रमुख धर्म है, अन्य तो उसकी सुरक्षा के लिए है—'अवसेसा तस्स रखणट्ठा ।'

आध्यात्मिक चेतना की ऊर्ध्व गति से ही सम्भव है--सनातन मूल्यबोध। वीर प्रभु ने इसी से शान्ति मार्ग पर चलने को कहा—

बुद्धे परिनिव्वुडे चरे
गाम गए नगरे व संजए ।
सन्ति मग्गं च बूहए
समयं गोयम ! मा पमायए ।
—उत्तराध्ययन सूत्र १०/३६

अहिंसा की साधना ही शान्ति का मार्ग है। वे कहते हैं 'बुद्ध, तत्वज्ञ और उपशान्त होकर पूर्ण संयतभाव से गौतम ! गाँव एवं नगर में विचरण कर। शान्तिपथ पर चल। अहिंसा का प्रचार कर। क्षण भर भी प्रमाद न कर।' उन्होंने बताया कि धर्महीन नीति समाज के लिए अभिशाप है और नीतिहीन धर्माचरण केवल वैयक्तिक। धर्म व्यवहार से उत्पन्न है, ज्ञानी पुरुषों ने जिसका सदा आचरण किया वे व्यवहार और आचरण ही अपेक्षित हैं। इस प्रकार महावीर ने अहिंसा को वृहत् और व्यापक सामाजिक धरातल दिया। उनका विधान था 'चारित्तं धम्मो' सदाचार ही चारित्र धर्म है। व्यक्ति की हो, चाहे समाज या शासनतन्त्र की, हिंसा का कारण भय और क्रोध है। जैनधर्म कषाय को कालुष्य का कारण मानता है—आवेश, लालसा, अधिकारलिप्सा और वित्तेषणा ही हिंसा और परिग्रह के हेतु है, 'गंथेहिं तह कसाओ, वड्ढइ विज्झाइं तेहि विणा ।' आधुनिक समाजशास्त्र व मनोविज्ञान में भी क्रोध, मान, माया और लोभ का वैज्ञानिक पद्धति से निरूपण मिलता है। क्रोध को ही लें। क्रोध प्रतिशोध माँगता है, वह मानसिक और शारीरिक संतुलन नष्ट कर देता है। भगवती सूत्र में इसकी विभिन्न अवस्थाओं का विवरण प्राप्त होता है। भगवान महावीर कहते हैं क्रोध—उचित अनुचित का विवेक नष्ट करने वाला है, वह प्रज्वलन रूप आत्मा का दुष्परिणाम है।

आज मनोविज्ञान ने भी इस तथ्य को भलीभाँति उजागर कर दिया है। चरक ने तो यही बताया कि क्रोध आदि विकार से व्यक्ति ही नहीं, उसके आसपास का वातावरण भी विकृत हो जाता है। व्यक्ति और समाज में सार्वदेशिक शान्ति तभी सम्भव है जब हम अपनी जीवन प्रक्रिया में आमूल परिवर्तन करें। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक इरिक बर्न का कथन है—

'मनुष्य की रचनात्मक जिजीविषा और संहारात्मक विजीगिषा वह कच्चा माल है, जिसका आज मनुष्य और संस्कृति को उपयोग करना है—समाज और मानवजाति की संरक्षा के लिए उसे संहारात्मक विजीगिषा समाप्त कर रचनात्मक जिजीविषा को आध्यात्मिक व जागतिक समृद्धि में लगाना होगा।'

व्यक्ति का मानसिक विकास और सामाजिक शान्ति इस पर निर्भर करती है कि वह इन जन्मजात शक्तियों का किस उद्देश्य से प्रयोग करे। व्यक्ति का मानसिक संतुलन ही सामाजिक संतुलन का प्रथम चरण है। महावीर ने अपनी सारी शक्ति इसी में लगाई। उन्होंने अहिंसा के सिद्धान्त को मनुष्य या पशु हिंसा तक ही सीमित न रखकर समस्त सचराचर जगत पर, षटकाय जीवों पर, जीवन के प्रत्येक पहलू और पक्ष पर अनिवार्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समझा। अहिंसा के निषेधात्मक और विधेयात्मक दोनों रूपों पर गहन विचार किया। भाव हिंसा और द्रव्य हिंसा का सर्वांगीण विवेचन कर हिंसा के पाँच समादान बताए। उन्होंने कहा--'अहिंसा निउणा दिट्ठा सव्व भूएसु संजमो (दशवैकालिक ६-९) क्योंकि सभी प्राणियों को जीवन प्रिय है—सुख अनुकूल है और दुःख प्रतिकूल। 'अप्पिय वहा, पिय जीवणो, जीविउ कामा, सव्वेसिं जीवियं पियं' (आचारांग १-९२-७) महावीर की इस अहिंसा संस्कृति को ही आधुनिक युग में महात्मा गाँधी ने अपनाया, विनोबा भावे ने सर्वोदय सिद्धान्त में प्रमुख माना।

नीग्रो नेता मार्टिन किंग लूथर का उद्धरण भी यहाँ समीचीन होगा 'अहिंसक व्यक्ति की यह मान्यता है कि अपने विरोधी की हिंसा के समक्ष भी वह आक्रामक भाव न रखे अपितु यह सत्प्रयास करे कि उसकी हिंसात्मक या आक्रामक शक्ति का निरसन अहिंसा से संभव हो सकेगा।' लूथर कहता है 'धिक्कार के बदले धिक्कार वापस लौटाने से धिक्कार का गुणन होता है, अन्धकार कभी अन्धकार दूर नहीं करता—हिंसा से हिंसा की वृद्धि होती है।' महात्मा गाँधी ने इसको ही सार्वभौम प्रेम और सर्वाधिक दम कहा था। अहिंसा व्यक्ति को अभय करती है और दूसरों को भी। अभयं वै ब्रह्म मा मैषी—यही उसका मंत्र है। विनोबाजी के शब्दों में इससे मनुष्य सत्यग्राही होता है।

बेलजियन समाजवादी चिन्तक बार्ट डे लाइट ने लिखा—'हिंसा का प्राचुर्य जितना अधिक होगा, क्रांति उतनी ही कम। ऐसीमोव का वाक्य है 'हिंसा असमर्थ आदमी का अन्तिम आश्रय है।' हिंसा और कटुता के मध्य सामाजिक परिवर्तन अपनी शक्ति और अर्थवत्ता समाप्त कर देता है। आज की जनतांत्रिक पद्धति की मूलभूत आवश्यकता हिंसाविहीन शासन तन्त्र से ही संभव है। महात्मा गांधी के अनुसार अहिंसा का विज्ञान ही यथार्थ प्रजातन्त्र की स्थापना का समर्थ साधन है (यंग इंडिया—मार्च १९, १९२५) हिंसा सामाजिक दुराग्रह है, अहिंसा सत्याग्रह। वर्तमान समय में जनता का विरोध व्यक्ति और सम्पत्ति के विरुद्ध हिंसापरक बन जाता है, ऐसा विरोध सामाजिक परिवर्तन का उपकरण कभी नहीं बन सकता, वह तो अव्यवस्था, तनाव और निराशा को पनपाकर और अधिक हिंसात्मक कार्रवाई का निमित्त बनता है।

आधुनिक चिन्ताधारा के अन्य सिद्धान्तों का तथ्यानुशीलन भी करें।

स्वीडन अर्थशास्त्री एडलर कार्लसन ने इस दृष्टि से 'विपर्यस्त उपयोगितावाद' की व्याख्या करते हुए लिखा है—'हमें अपनी सामाजिक व्यवस्था का पुनर्निर्माण मनुष्य के कष्टों को कम करने के लिए करना चाहिए। जो आज धनी और समृद्ध हैं उनका आर्थिक स्तर बढ़ाना एक खोखला व सारहीन विचार है। जब तक प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति न हो जाए, कोई भी अधिक समृद्ध न हो—इसके लिए आवश्यक है—नैतिक साधन न कि भौतिक उपाय।' ये नैतिक साधन ही व्यक्ति और समाज को शांति लाभ दे सकते हैं। इसी से मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा अब (जूलियस सेगल के शब्दों में)—मानसिक रोग और पीड़ा से मुक्ति के लिए आत्मपरितोष पर अधिक बल देती है—आत्मोपलब्धि पर, क्योंकि इसी से व्यक्तित्व का स्वस्थ और समीकृत विकास संभव है। मनुष्य के प्रकृत मूल्य बोध से अव्यवस्था को भी सुव्यवस्था में परिणत किया जा सकता है। ल्योन आइजनबर्ग ने इस पर जोर दिया है कि 'हमें मनुष्य की प्रकृति का ही मानवीकरण करना है क्योंकि मानवीय हिंसा सामाजिक दमन का हेतु नहीं उसकी प्रतिक्रिया का परिणाम है।'

वर्तमान विसंगति यह है कि आज बालक या किशोर वर्ग जब युवावर्ग को संघर्ष और हिंसारत देखता है, जब जातीय नेता स्वार्थ व सत्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के लिए यही मार्ग अपनाते हैं, तो वह भी इस दुष्प्रभाव में आकर उसी पथ पर चलता है—उनका अनुकरण करता है। इसी से ल्योन आइजनबर्ग कहता है कि हिंसा दुष्परिणाम है अन्तरवर्ग संघर्ष का, जिसे हमारे नेता बढ़ावा दे रहे हैं। हमें समस्त मानव समाज को अविभक्त इकाई के रूप में ग्रहण कर मानवीय मूल्यों का विकास करना होगा। भ्रातृत्व और मैत्री का सिद्धान्त प्राचीन है, पर आज मानव अस्तित्व की रक्षा की वह प्रथम अनिवार्यता है।

हमें यह निःसंकोच स्वीकार करना होगा कि मनुष्य ही अपना भाग्यविधाता है व पुरुषार्थ ही उसका नियामक है। प्रसिद्ध विचारक बर्ट्रेन्ड रसल ने सामाजिक परिवर्तन के सिद्धान्तों में जीवन की इस आंतरिक प्रक्रिया को—अहिंसा, सत्य, समता, अपरिग्रह और सात्विक आचरण को ही प्रमुख गिना है।

ये विद्वान विचारक आज जिस तथ्य की ओर संकेत कर रहे हैं, शताब्दियों पूर्व भगवान महावीर ने यही बताया था। उन्होंने 'आयओ बहिया पास तम्हा न हन्ता न विघाइए।' अहिंसा के द्वारा विश्व मैत्री का संदेश दिया, मनुष्य मनुष्य को समान बताया—

"चरणं हवइ सधम्मो सो हवइ अप्पसमा वो'
सो राग रोस रहिओ जीवस्स अण्ण परिणामो।"

न कोई जाति उच्च है और न कोई हीन—नो हीणो णो-अइरित्ते णो पीहए' उन्होंने सत्य की सापेक्षता के साथ-साथ सहअस्तित्व पर जोर दिया, पुरुषार्थ के लिए कहा—पुरिसा! तुममेव तुमं मित्त', किं बहिया मित्तमिच्छसि। कषाय व दुष्प्रवृत्तियों से मुक्ति का मार्ग बताया, आध्यात्मिक विकास के साथ मानवीय उच्चता और चारित्र पर दृष्टि रखी। उनका उद्‌घोष था—'सच्चं मिधिति कुव्वह।' जहाँ सत्य है वहाँ भय नहीं। 'न भाइयव्वं।' वे समझाते रहे 'विसंकटकओव्व हिंसा परिहरियव्वा तदो होदि।'

सबके साथ मैत्री भाव रखो, किसी से वैर-विरोध न हो। यदि युद्ध ही करना है तो अपने से करो। आन्तरिक शुद्धि ही सर्वश्रेष्ठ है, बाह्य शुद्धि सुमार्ग नहीं। धन और संग्रह प्रमाद का कारण है—'वित्तेण ताणं न लभे पमत्ते इमम्मि लोए अदुवा परत्था।' 'लाभस्सेसो अणु फासो मन्ने अन्नय-राभावे' उन्होंने सदैव जाग्रत रहने को कहा—विनय और विवेक को आत्मज्ञान की पीठिका बताया। शोषण और परिग्रह का खुलकर विरोध किया—क्योंकि 'जहा लाहो तहा लोहो, लाहा लोहो-पवड्ढइ' परिग्रही को शान्ति, सुख और सन्तोष कहाँ—वह तो 'सव्वतो पिच्छतो परिमसदि पलादि मुज्झदिय।' यही तो अहिंसा का राजपथ है—शान्त, स्थिर, सौम्य और श्रेष्ठ।

आज की भयभीत संत्रस्त और अभिशप्त मानव जाति के लिए यही तो परमौषधि संजीवनी है, लोकहित और सर्वभूतहित की, सर्वोदय की, सामाजिक परिवर्तन की। महावीर की परम्परा में ही महात्मा गाँधी ने भी यही मार्ग अपनाया और कहा—सामाजिक और आर्थिक अहिंसा ही स्थायी शान्ति की जननी है। अहिंसा से ही मानवसमाज वर्तमान विभीषिका, विजीगिषा और विसंगति से मुक्त हो सकता है। उन्होंने स्पष्ट कहा कि एक सच्चा अहिंसक व्यक्ति समस्त समाज का रूपान्तरण कर सकता है। महावीर ने यही किया और यही कहा। श्रीगुणवन्त शाह ने ठीक ही कहा है कि आज जैन (और अहिंसा) दर्शन की सार्थकता अहिंसक समाज की रचना की स्थापना में है।

ऐसे समाज में शाकाहार का बोलवाला होगा, प्रदूषण न्यूनतम होगा, शोषण नहीं के बराबर और आर्थिक असमानता एकदम कम होगी और युद्ध सदा के लिए नहीं होगा। आज हमें अहिंसा को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवन के साथ जोड़ना है। अहिंसक समाज का अर्थ है प्रेम, करुणा और मित्रता का समाज। इसी से आज के संघर्ष में अहिंसा के धार्मिक मूल्य के साथ सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और मानवीय मूल्य एवं अर्थवत्ता भी नितान्त आवश्यक है, यदि यह नहीं होता है तो पृथ्वी पर जीवन के नाश के चिह्न स्पष्ट है। महावीर को विचार क्रांति ही हमारे आचार का आश्रय है, सम्बल है। सामाजिक परिवर्तन के लिए सूक्ष्म और महत् अहिंसा व्यक्ति और समाज दोनों के लिए अनिवार्य है—वही केवल मात्र साधन है। आणविक युद्ध के न होने पर भी, पृथ्वी मौन भाव से हमारी जीवन कृत प्रक्रिया के कारण नष्ट हो रही है, उसे यदि बचाना है तो उसमें आमूल परिवर्तन करना अति आवश्यक और अनिवार्य और यह अहिंसा की अपरिमेय व्यक्ति से ही सम्भव है।

सन्दर्भ स्थल

१	Carles Ronmolo	: Truth and Non-Voilence (UNESCO-SYMPOSIUM)
२	C. Wright Mill	: The Causes of World-War Three, 1950
३	P. Sorokin	: The Reconstruction of Humanity.
४	Eihustin	: Interview, July, 1955
५	T. Unnithan Yogendra Singh	: Sociology of Non-Voilence.
६	J. S. Mathur P. C. Sharma	: Non-Voilence and S.cial Change
७	Unto Tahzinen	: Ahinsa
८	Kausleya Walli	: Ahinsa in Indian Thought.
९	S. Radhakrishnan	: Religion and Society
१०	P. Sorokin	: Social and Cultural Dynamics
११	Eric Berne	: A Layman's Guide to Psychiatry and Psychoanalysis
१२	वी. एन. सिन्हा गुणवंतशाह	: जैन धर्म में अहिंसा। महामानव महावीर
१३	युवाचार्य महाप्रज्ञ	: महावीर की साधना का रहस्य
१४	मुनि नथमल	: अहिंसा तत्व दर्शन
१५	बेचरदास शास्त्री	: महावीर वाणी
१६	E. Hytton	: Non-Voilence and Developmental Work
१७	Alduous Muxley	: Ends and Means
१८	Edward Wilson	: Sociobiology
१९	M. Francis Abraham	: Sociobology : Modern Social Theory
२०	सर्व सेवाश्रम प्रकाशन	: समता सूत्र
२१	श्रीचन्द रामपुरिया	: महावीर वाणी
२२	निर्मल कुमार	: भगवान महावीर
२३	डा. भागचन्द शास्त्री	: जैनदर्शन व संस्कृति का इतिहास
२४	मुनि अमोलक ऋषि	: जैन धर्म व दर्शन
२५	गुणवन्त शाह	: महामानव महावीर

विभिन्न जैनागम, यंग इण्डिया, अमेरिकन रिव्यू आदि पत्रिकाएँ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org